ईशुख्रीस्त पर जैन धर्म का प्रभाव

✻ देवलोक से दिव्य सान्निध्य ✻
प. पू. गुरुदेव जम्बूविजयजी महाराज

✻ संपादक ✻
भूषण शाह

✻ प्रेरणा ✻
आ.श्रुतसागरजी
आ.प्रज्ञसागरजी

✻ लेखक ✻
श्वेतपिच्छाचार्य
आ.विद्यानंद मुनिराज

✻ प्रकाशक ✻
मिशन जैनत्व जागरण
'जंबूवृक्ष' C/503-504, श्री हरी अर्जुन सोसायटी, चाणक्यपुरी ओवर ब्रिज के नीचे,
प्रभात चौक के पास, घाटलोडीया, अहमदाबाद – 380061
M : 9601529534, 9408202125

© संपादक एवं प्रकाशक
वीर सं. २५४६, विक्रम सं. २०७६, ई.स. २०१९

मूल्य : ५०   आवृत्ति : प्रथम   प्रत : ५०००

प्राप्तिस्थान

जयपुर
आकाश जैन
A/१३३, नित्यानंद नगर, क्वीन्स रोड,
जयपुर (राज.)

जोधपुर
विजयराजजी सिंघवी
जी हुजूर रेडीमेंट, त्रिपोलीया बजार,
जोधपुर-३४२००२ (राज.)

उदयपुर
अरुण कुमार बडाला
उदयपुर शहर, ४२७ बी, एमराल्ड टावर,
हाथीपोल, उदयपुर-३१३००१ (राज.)

करौली
डॉ. मनोज जैन
B-३, एच.पी. पेट्रोलपंप के पीछे,
नयी मंडी, हींडौन सीटी,
करौली-३२२२३० (राज.)

लुधियाणा
अभिषेक जैन : शान्ति निटवेर्स,
पुराना बाजार, लुधियाणा (पंजाब)

आग्रा
सचिन जैन
डी-१९, अलका कुंज, खावेरी फेझ-२,
कमलानगर, आग्रा (उ.प्र.)

दील्ही
मेघ प्रकाशन
C/o. मेघराजजी जैन,
B-५/२६३ यमुना विहार, दिल्ही-११००५३

नाशिक
आनंद नागशेठिया : ६४१, महाशोबा लेन,
रविवार पेठ, नाशिक (महा.)

मुंबई
जीतेन्द्र जैन : माइक्रोनीक्ष इन्फोटेक
८०, गणेश भवन, चौथा माला,
ओफीस नं. ५०, रामवाडी,
जागृती माताजी मार्ग, काल्बादेवी,
मुंबई-४००००२ (महा.)

के. जी. एफ.
आशीष तालेडा
प्रीन्स सूरजमुल्ल सर्कल, रोबर्ट सोनपेट
के.जी.एफ.-५६३१२२ (कर्णा.)

विजयवाडा
अक्षयकुमार जैन
डोर नं. ११-१६-१/१
सींग राजुवाली स्ट्रीट
वीजयवाडा-५२०००१ (आं.प्र.)

सीकन्द्राबाद
रुपेश वी. शाह
२-३-५४०, पहला माला, सुनीता सर्जन
अपार्टमेन्ट, पार्श्व पद्मावती मंदीर के सामने,
डी.वी. कोलोनी, सीकन्द्राबाद-५००००३

बेंग्लोर
अरवींदकुमार ओसवाल जैन
प्रेम मेन्शन, नं. १४, २१वां क्रोस, कीलरी रोड,
बी.वी.के. आइनगर रोड क्रोस
बेंग्लोर-५६००५३,

डिझाइन : वीतराग ग्राफिक्स, अहमदाबाद (M) 8980007872

महात्मा ईसा

(प्रसिद्ध रुसी विद्वान् डॉ. नोतोविच द्वारा लिखित Unknown Life Of Jesus श्री सावरकर-रचित 'मराठी-ख्रिस्त-परिचय' श्री नागेन्द्र-नाथ बसु सम्पादित 'हिन्दी विश्वकोष, ३ भाग'; पं० सुन्दरलाल लिखित 'ईसा और ईसाई धर्म' तथा मई सन १९३१ के बाम्बे समाचार-पत्र के आधार पर लिखित।)

यह संसार सत् और असत् के नित्यद्वन्द्व से घिरा है। यहाँ बुराई ओर अच्छाई का शाश्वत संघर्ष छिडा हुआ है। कर्म परिणाम से कभी लम्बे समय के पश्चात् कोई एक व्यक्ति असाधारण कृतित्व का सामर्थ्य लेकर विश्व में आता है ओर युगों से चली आती हुई कुरुढियों तथा अन्धविश्वास पर अपने अनुभूत, दृष्ट एवं सन्तुलित विवेक के छेनी हथोडे से चोट करता है। वह चोट विध्वंसक नहीं अपितु सर्जनात्मक होती है, कलाकार की टांकी के समान। उसमें नवजागरण तथा सत्य के उन्मेष की भावना निहित होती है। इस प्रकार असत्पक्ष के निराकरण का आग्रह रखने वाली उन भावनाओं के प्रतिपादन के लिए आने वाले उस विशिष्ट व्यक्ति को जनसमुदाय संदेह और असूया की दृष्टि से देखता है।

अपने जन्मपूर्व से सामाजिक रुप में पालित-लालित उन रुढियों और परम्पराओं के कारण वह उस नवीनता को पचाने का सामर्थ्य अपने में नहीं पाता और अपनी कल्प पाचन-शक्ति का दोष उस नवीन उपदेष्टा के मत्थे मढने का प्रयत्न कर अपने को उससे कहीं अधिक श्रेष्ठ तथा विवेकी जताने का दुर्बल प्रयत्न करता है। ऐसी परिस्थिति में जागरण की मशाल लेकर मार्गदर्शन करने वाला व्यक्ति उस रुडे समूह में एकाकी रह जाता है तथा उन समूहबद्ध कोटि-कोटि अनर्गल प्रलापकों को सच्चाई की अमृत घूंट पिलाने के लिए भी असीम श्रम करता देखा जाता है। यह बात नहीं कि उसे अपने व्यक्तित्व की ऊर्जा से लोक को सम्भ्रम में डालने की महत्वाकांक्षा होती है, अपितु संसार अन्धगर्त से बचे और कल्याणमार्ग को

देख-पहचान सके, यही उसका मानस-अमिप्राय होता है । वे उस पीयुष कलश को मिल-बांटकर पीना चाहते है, जो आत्मा के परम-पुरुषार्थ से उसे मिल गया है । इस विचारधारा से उन्हें, जो ऐसा सत्याग्रह करते हैं, सराग सम्यग्दृष्टि कहा जा सकता है । विश्व की मानवता का परित्राण करने के लिए वे क्या कुछ नहीं करते ! कितने संकटों को झेलने के लिए परायण नहीं होते !

यह तो मानव समाज का दुर्भाग्य ही कहा जा सकता है कि उन अमृत पिलाने वालों को वह पूर्वाग्रह का उपनेत्र लगाकर देखने का आदी हो गया है और सुकरात के हाथों से विषपात्र, गांधी की अहिंसक व्यक्ति चेतना पर पिस्तोल की गोलियां, आचार्यकल्प पं० टोडरमलजी की सेवाओं को गजेन्द्र पद और योशुखिस्ट को लकडी के क्रास पर देखकर अपने अनन्तानुबन्ध से चिपके हुए पापों को प्रसन्न-पुलकायमान करने में ही आनन्द का अनुभव करता है । यदि उसके अन्तःकरण ने कदाचित् आंसुओं की पयस्विनी में स्नान भी किया है तो बहुत देर से, जब उन शुभ देशनाओं से लोक को उपकृत करने वाले का पार्थिव शरीर कीलों, कांटो ओर गोलियों की भेट कर दिया गया होता है ।

महात्मा ईसा का जीवन और बलिदान इसी प्रकार के कुटिल देवतन्तुओं से बुना हुआ है जिसे कांटो पर चलना पडा ओर शूलों पर जीना पडा, जिसे पद-पद पर अवरोध और पथरावों के बीच अपने आत्मा के सत्य को उद्गीर्ण करना पडा । महात्मा ईसा के वे उपदेश, जो भगवान महावीर के अहिंसा परम-धर्म के अति समीप एवं उससे अत्यन्त प्रभावित है, उस काल के पुराणपन्थी, अर्थलोलुप पुजारियों को अपने निहित स्वार्थों के हक में अच्छे नहीं लगे, फलतः ईसा को कुरुढियों के जमे-जमाये मोर्चे से यावज्जीवन लोहा लेना पडा । उस लोहे की मुरच का विष इतना सांघातिक सिद्ध हुआ कि एक दिन उन्हें शरीर रुप से उससे परास्त होना पडा । यद्यपि आत्मा से वह विजयी हो हुए ।

आज ईसा के विषय में शोधक विद्वानों के अपार श्रम से जिज्ञासा रखने वालों के लिए इतनी विपुल सामग्री प्रस्तुत है कि उसे हाथ की रेखाओं के समान देखा-पढा जा सकता है । उन शोधकों ने इस बात को प्रायः स्वीकार कर लिया है कि मसीह के उपदेशों का मूल उद्गम भारत

है । भारतीय श्रमण-संस्कृति और यहां के तत्कालीन साधु विद्वानों के सम्पर्क में आकर ईसा ने जिस अतिभौतिक आत्मतत्व का साक्षात्कार किया, उसी का मन्थन उनकी उस उपदेशनाओं में मुखर हुआ है । तथ्यों के इन सुरभि सने विचारपुष्पों में श्रमण-संस्कृति की दिव्यता की सौरभ फल रही है । भगवान महावीर का सातिशय केवल भारतीयों के निःश्रेयस के लिए ही प्राणवान सिद्ध हुआ हो, सो बात नहीं, अपितु यह समुद्र पार के मानवों को भी उपयोगी हुआ है ।

जिस प्रकार गुलाब की कलम लगाकर नये गुलाब के पेड की परम्परा कायम रखी जाती है, उसी प्रकार भगवान के चारुचारित्रमूलक विचारपाटल की शाखा भारत आये हुए पाश्चात्य अतिथि को दी गयी, जिसका स्वतन्त्र विकास उसने पश्चिम में किया । आज के श्रमण-संस्कृति भक्तों को दो सहस्त्र वर्ष पूर्व की इस घटना से प्रभावना के उस नवीन मार्ग से अपने को परिचित अवश्य रखना चाहिए जिसका विस्मरण करने के उपरान्त जैनों की संख्या में आशातीत अल्पता आई है और आज भी जिनका 'अनेकान्त' पारस्परिक कषायमूलक अनेकान्त के नाखूनों से नुचता जा रहा है ।

अहिंसा जैसे विश्वप्राण धर्म की धात्री जिन-संस्कृति के प्रभावनापरिवेष को संकुचित करने में क्या हम ही कारण नहीं हैं ? भगवान ने कहा था, 'मनुष्य-जातिरेकैव'-यह मानव जगत् एक जाति है । किन्तु क्या हम अपने मानस में इसकी प्रतिध्वनि सुनते रहे हैं ? क्या उसी भावना से जिससे ईसाई समाज विश्व में-भारत में भी मिशनरी स्प्रिट से ईसाइत की प्रभावना का कार्य कर रहा है, हम क्रियाशील हैं ? किन उजाड वन-खण्डों, पार्वत्यभूमियों और पिछडी जातियों में वे दिन-रात एक करके काम कर रहे हैं, क्या हम में उस प्रकार के धर्मनिष्ठा-वान् पण्डित, श्रावक तथा त्यागी हैं जो तीर्थंकरों के पवित्र सन्देश को लेकर जाएँ वहाँ और करें सम्यक्त्व का प्रचार ? किन्तु शायद हम में ऐसा करने की भावना नहीं है । हमारा समय और बुद्धिबल तो उच्च श्रेणी के आत्मचिन्तन की दुरुह-ग्रन्थियों के विमोचन के लिए बना है और हम उससे अवकाश निकालकर इन नये प्रपंचों में नहीं पडना चाहते । पड भी नहीं सकते, सम्भवतः ऐसा कहते अपनी निर्बलताओं की अभिव्यंजनाओं से संकोच का

अनुभव होता हो । अस्तु

यद्यपि मेरे प्रबन्ध का विषय ईसा के दार्शनिक तत्त्वों के सम्बन्ध में उनकी भारतीयता और श्रमण-संस्कृति से प्रभावितता का निरुपण करना मात्र है तथापि यह सब उनकी जीवनी से पृथक् नहीं है, अतः संक्षेप में उनके जीवन-चरित के प्रसंग भी लिखने आवश्यक प्रतीत होते हैं । श्रमण-संस्कृति से स्नेहभाव रखने वालों के लिए ये निष्कर्ष निश्चय ही उपादेय होंगे ।

यरुशलम से ५० मील दक्षिण में स्थित एक छोटे पहाडी कस्बे नाजरथ में ईसा का जन्म हुआ । पिता यूसुफ बढई का काम करता था और बडी गरीबी में से होकर परिवार की गुजर चलती थी । **ईसा की मां मरियम एक दयावती महिला थी ।** ईसा अपनी मां को घर के काम-काज में सहयोग करता रहता था जबकि उसका **पिता काठ छोलने के अपने धन्धे में लगा रहता था ।** दयालुता, नम्रता, सेवापरायणता इत्यादि मानवीय गुण ईसा की जन्म जात संपदा थी । वे यहूदियों के सबसे बडे मंदिर यरुशलम प्रायः जाते रहते थे ।

अपने जन्म के बारहवें वर्ष में बालक ईसा को प्रथम बार यरुशलम जाने का अवसर प्राप्त हुआ । किसी बडे नगर अथवा लोगों की किसी भीड-भाड में सकुल धार्मिक स्थान को देखने का उसका यह प्रथम अवसर था । वहाँ मंदिर में दैवता को बलि चढाने के लिए बिकने आये हुए पशु बडी संख्या में एकत्रित थे और अपने लिए पुण्य बटोरने वाले, अन्य कई प्रकार की लालसा रखने वाले उन्हें गाजर-मूली के समान मोल-भाव करके खरीद रहे थे, काट रहे थे और बिना किसी हिचक या जुगुप्सा के वध के कभी न समाप्त होने वाले व्यापार में लगे हुए थे । वहां जाने वाले के लिए यह दृश्य नवीन नहीं था, किन्तु ईसा के नरम दिल में धर्म के नाम पर किये जा रहे ईन अमानुषिक बर्बर अत्याचारों से एक मूक आह निकल गयी । अनेक प्रकार की शंकाओं से उसका हृदय कीलित हो उठा । ओह, धर्म के नाम पर पुरोहितों ने कितना षड्यन्त्र रच रखा है ! कितना पाखण्ड मजहबी ख्यालों में विष के समान मचल रहा है ! ये गण्डे तावीज और गले-सडे रीति-रिवाज क्या धर्म कहे जा सकते हैं ! उस बालक के हृदय में जिज्ञासा उत्पन्न हुई जो दर्शनशास्त्र की मूल प्रेरणा है । किन्तु बढई

का वह गरीब बालक अध्ययन से नितान्त वंचित था । अपने जातीय धर्म साहित्य का उसे कुछ भी ज्ञान नहीं था । अपने इस अज्ञान पर ईसा का अन्त:करण क्रन्दन कर उठा, एक सच्चे ज्ञान के खोजी की तडप उसे व्यथित करने लगी । वह यरुशलम के विशाल मंदिर प्रांगण में जहां बडे-बडे आलिम यहूदी धर्म के विद्यालय चलाते थे, उनकी सेवा में बैठ गया । परन्तु गरीब यूसुफ के लिए उसे वहां छोडना शक्य नहीं था, फलत: तीन दिन के पश्चात् ही उसे पिता के साथ नाजरथ लौट आना पडा । किन्तु उसके हृदय में जिज्ञासा ने घर कर लिया था, इसलिए जब तक उसकी शान्ति नहीं हो जाती, उसका घर बैठे रहना कठिन हो गया । यही कारण था कि जन्म के तेरहवें वर्ष में जब उनकी विवाहचर्चा चल रही थी, वह चुपचाप घर से निकल गये और कुछ सौदागरों के साथ सिन्ध होते हुए हिन्दुस्तान पहुंच गये ।

हिन्दुस्तान में वह सत्रह वर्ष रहे । यह बात डॉक्टर नोतोबिच ने, जो रुसी विद्वान और परम खोजी थे और जिन्होंने ४० वर्ष पर्यन्त ईसा पर शोध की, उसके लिए देश-विदेश का अबाध पर्यटन किया, प्रामाणिक रुप से लिखी है । तेरह वर्ष के बालक के लिए यह निर्णय करना सुगम है कि आगे के सत्रह वर्ष वह अध्ययन में बिताये । यही तो संस्कारशील होने तथा अध्ययन करने की अवस्था है । हमारे आधार की पुष्टि डॉ. नोतोबिच के उन संकलनों से भी हो जाती है, जो उन्होंने अपने शोध के अन्तर में प्राप्त किये । संक्षेप में यह कि ईसा के भारत में आने की सूचना उन्हें ऊगादी के रेगिस्तान में स्थित एक मठ से प्राप्त हुई । साथ ही, उन्हें तिब्बत और हिन्दुस्तान के बीच हैमिन नामक स्थान पर एक प्राचीन हस्तलिखित पुस्तक पाली भाषा में प्राप्त हुई, जिससें हजरत ईसा के भारत, तिब्बत होते हुए आने का सविस्तार वर्णन किया गया था । **'अनमोल लाइफ ऑफ जीसस'** नाम से पुस्तक का प्रकाशन हुआ है । इसी पुस्तक में लिखा है कि वह जगन्नाथ, वाराणसी, राजगृह और कपिलवस्तु में घूमते रहे । उन्होंने बौद्धों से बौद्ध-साहित्य का अध्ययन किया और बहुत दिनों तक जैन साधुओं के पास रहे । मराठी ख्रिस्त परिचय में लिखा है कि **''कांही दिवस तो जैन साधु बरोबर रहिला'' (पुष्ठ ८८) ।** प्रसिद्ध यहूदी विद्वान जाजक्स ने लिखा है कि हजरत ईसा ने पैलेस्टाईन में ४० दिनों का उपवास किया था । यह उपवास की प्रेरणा उन्हें भारतीय जैन क्षेत्र पालीताना में

जैन-श्रमणों के साथ रहते समय हुई । आज जिसे फिलिस्तीन कहते हैं, उसका जूना नाम पैलेस्टाइन है, जो पालीताना शब्द का ही उच्चरित रुपान्तर है । इस प्रदेश का यह नामकरण भारतीय जैन प्रदेश से प्रेम और मसीह की शिक्षाभूमि को स्मरण रखने की उदात्त प्रेरणा से अनुबन्धित है, ऐसा कहना अत्युक्ति न होगी ।

भारतीय श्रमण-संस्कृति ने ईसा को अत्यधिक प्रभावित किया और उनके मन में भारत आने से पूर्व जो धार्मिक मन्थन चल रहा था, उसे निश्चयात्मकता मिली । धर्म का मानवीय और ईश्वरीय रुप उन्हें श्रमणों के सान्निध्य में प्राप्त हुआ और यूनान लौटकर जो कुछ उन्होंने उपदेश रुप में कहा, उसमें अधिकांश श्रमण-संस्कृति की गूंज थी । जैनों की पांच अणुव्रत (अहिंसा, सत्य, अचौर्य, ब्रह्मचर्य और अपरिग्रह) उन्हें अत्यन्त प्रिय थे और अपने व्याख्यानों में बडे आग्रह के साथ उन्होंने इनको कहा है । इसे यों कहना अधिक संगत होगा कि भगवान महावीर के अहिंसा धर्म के विचार उस पश्चिमी महात्मा के कण्ठ में बसकर फिलस्तीन की गलियों में अनुवादित हो रहे थे । धर्म के प्रति एक उदार दृष्टिकोण तैयार हो रहा था । ईसा मसीह ने प्रचलित यहूदी धर्म में भी जितनी अच्छाइयाँ थी उन्हें बीन-बीन कर अलग करना, उपयोग करना जारी रखा । मसीह के इस क्रांन्तिकारी आन्दोलन से तत्कालीन गद्दीधारी धार्मिक समाज बहुत क्षुब्ध हो उठा क्योंकि उनके ढकोसलों के ढकने उलटने का कार्य बडे जोर-शोर से ईसा ने करना आरम्भ कर दिया था । इससे उनकी आय पर बुरा असर हो रहा था ।

ईसा को अपने उपदेश देने के लिए किसी बडे जमाव की प्रतीक्षा नहीं थी, वह तो जहां कहीं घूमते-फिरते खडे होकर दस-पांच लोगों के एकत्र हो जाने पर भी अपना उपदेश देने लगते थे । उनके अधिकांश प्रवचनों का सार प्राय: क्षमा, सरलता, अहिंसा, बलिदान न करना, परिग्रह न रखना इत्यादि के सम्बन्ध में इस प्रकार है-''बलिदान बन्द करो । ईश्वर को तुम्हारे द्वारा जलाये जाते हुए उन पशुओं की दुर्गन्ध से सख्त नफरत है । यह पाप है और जब तुम मेरी दया के लिए हाथ फैलाओगे, मैं आंख मूंदकर तुम्हें देखुंगा भी नहीं । जब तुम प्रार्थना करोगे मैं नहीं सूनुंगा । मुझे न छुओ, क्योंकि तुम्हारे हाथ रक्त में डूबे हैं । पहले हाथ धोओ और

तन–मन को पवित्र बनाओ, अनाथों, विधवाओं और विकलांगो का पालन करो, दयाधर्म को अपने में–आत्मा में–जगाओ और इसके पश्चात् आकर मुझ से बात करो । क्या बलिदान देते रह कर तुम हत्यारे और धार्मिक एकसाथ कहला सकोगे ? ओह, मंदिरों को तुमने बूचडखाना बना दिया है । यहां धर्म की हाट के नाम पर पाप के बाजार लगे हुए हैं और अन्धविश्वास को धार्मिकता के नाम से सम्बोधित करने वाला प्रत्येक व्यक्ति एक कसाई नजर आता है, जो निरीह पशु को मारकर अपने लिए जीवन की याचना करता है ।'' इस प्रकार उनके उपदेशों के शब्द–शब्द में मैत्री, करुणा, दया, अहिंसा कूट–कूट कर भरी है ।

इतिहासविद् तथा शोधकर्ता इस बात पर प्रायः एकमत हैं कि महात्मा ईसा का सुप्रसिद्ध गिरिप्रवचन तथा पीटर, एण्ड्रू, जेम्स आदि शिष्यों को दिये गये उपदेश जैन सिद्धान्तों के अत्यन्त समीप हैं । अपार करुणा में डूबे हुए उनके शब्द विश्व में पीडाकुल मानव के लिए शान्ति के उपलेख हैं तथा अहिंसा का मार्गदर्शन करने वाले हैं । यह खेदजनक है कि उनके अनुयायी कहलाने वाले उनके उपदेशों और आदेशों को यथावत् पालन नहीं करते और हिंसा तथा सामरिक योजनाओं में अपने उपार्जित ज्ञान–विज्ञान का प्रयोग करने में आतुर हैं । यद्यपि ईसा ने उनको कहा है कि जो लोग तलवार का उपयोग करेंगे वे तलवार से ही मरेंगे तथापि आज प्रतियोगितात्मक दौड में वे परस्पर एक–दूसरे से आगे निकल जाना चाहते हैं । ईसा के हृदय में किसी प्रकार का भय नहीं था और न किसी के प्रति वैर–विरोध–मूलक भावना ही थी । वह तो सत्य के उपासक थे और इसी सत्य के प्रतिपादन के लिए खुले चुनौती भरे शब्दों में चौपालों में बोलते थे । उन्होंने यरुशलम के उन पुजारियों और पुरोहितों को उनके ही समक्ष कडे शब्दों में कहा कि बाहर से पात्रों को चमका चमकाकर उजालने वालों के हृदय में मलिनता भरी हुई है । काम, क्रोध, मद, मोह और लोभ के मालिन्य को साफ किये बिना शरीर और वस्त्रों को निर्मल करना व्यर्थ है । यह सफाई उस कब्र के समान है जो बाहर लिपी–पुती होने पर भी भीतर से हड्डियों और सडन से दूषित है । यह बडे दुःख की बात है ।

ईसा को पाप से सख्त नफरत थी । उन्होंने कहा है कि यदि तुम्हारी एक आंख पर पाप बैठ गया हे तो अच्छा हो कि तुम उसे निकाल

दो । सारे शरीर को नरक में झोंकने से तो एक अंग नष्ट होना ही अच्छा है । अहिंसा के लिए महात्मा यीशु के हृदय में बहुत बडा स्थान था । उनका कथन हैं कि जो कोई तुम्हारे एक गाल पर चांटा मारे तुम उसके सामने दूसरा गाल और कर दो, अर्थात् हिंसा को अहिंसा से जीतो । बुराई का मुकाबला न करो, वरन् जो बुराईयों का दास है उसके सामने अपनी अच्छाइयों का जखीरा खोल दो । ऐसा करने से उसे पश्चाताप होगा और आत्मविशुद्धि के लिए पश्चाताप आवश्यक है, यहां तक कि कुरता छीनने वाले को अपना कोट भी उतार कर दे दो । प्रसिद्ध है कि जैन कवि बनारसीदास ने अपने घर में चोरी के लिए आये हुए चोर को अपने ही हाथ से सामान उठवाने में सहायता की । पूर्व और पश्चिम के सुदूर अंचलों पर बसे हुए भिन्नकालिक दो व्यक्तियों में अहिंसा धर्म की यह सहज-समान अनुभूति क्या मानव के संवेदनशील हृदय की द्रवणशीलता को नहीं कहती । इसी को समझाते हुए ईसा ने कहा कि जो तलवार खींचेंगे वे तलवार से ही मिटेंगे । सच है, लोहे को लोहे का मुरच ही खा जाता है ।

किसी महान् आत्मा के उपदेश किसी देश-विशेष या व्यक्ति-विशेष के लिए नियत नहीं होते, अपितु वे सार्वजनीक होते हैं और सारी मानवजाति के लिए होते हैं, किन्तु अमृत को पचाना भी तो सभी के वश में नहीं होता । कुछ ऐसे व्यक्ति होते हैं जो विषकीट के समान विष खाकर ही प्रसन्न-स्वस्थ रहते हैं । यही कारण था कि अमृत पिलाने वाले महात्मा को शूली मिली । यरुशलम के बडे पुजारी कैयाफे ने उन्हें पकडवाकर कौंसिल के समक्ष प्रस्तुत करते हुए उन पर अभियोग लगाया कि वह कुफ्र फैलाता है । कुफ्र अर्थात् नास्तिक्य या धर्म विरोध एक महान् अपराध माना जाता था जिसका दण्ड मृत्यु-त्रासदायी मृत्यु के अतिरिक्त कुछ नहीं था । दण्ड को देने वाले अधिकारी ईसा के निर्मल चरित्र और उसके विशुद्ध उपदेशों को जानते थे और उन्होंने ईसा को अवसर दिया कि वह अपनी निर्दोषता सिद्ध कर सकते हैं, किन्तु ईसा ने कहा कि मैंने किसी प्रकार का कोई अपराध नहीं किया है, मैंने जो कुछ कहा है सभी के पक्ष में कहा है और उसको बदलने के लिए मैं प्रस्तुत नहीं हु ।

कौंसिल किसी निरपराध को दण्डित नहीं कर सकती थी, किन्तु

उन पुजारियों ने अधिकारियों को भय दिखाया कि यदि उन्होंने ईसा को दण्ड नहीं दिया तो विप्लव होने की आशंका है । निरुपाय अधिकारियों ने विवश होकर उन्हें क्रास पर कीलों से जड दिया, किन्तु ईसा निर्विकार थे । उस समय उन्होंने जो कुछ कहा उससे उनकी स्थित-प्रज्ञता झलकती है, राग-द्वेष से अतीत उनके समस्वभाव का परिचय मिलता है । वह कहते हैं-हे पिता, (ईश्वर) ईन्हें क्षमा कर देना कयोंकि ये नहीं जानते कि ये क्या कर रहे हैं । उनके मूल शब्द हैं **'तलिथ कुलोमी, एलोई एलोई लामा साषाक्थेन'** क्षमा की अपार शक्ति से अनुप्राणित इन शब्दों को कहने वाले के अन्तरात्मा में भगवान महावीर के 'खम्मामि सव्व जीवाणं सव्वे जीवा खमंतु मे, के अनुवाक चल रहे हों तो क्या आश्चर्य है और ईसा के दो सहस्त्र वर्षों पश्चात् भारत में उत्पन्न महात्मा गांधी ने भी हत्यारे नाथुराम गोडसे के लिए क्षमादान कहा था । वस्तुतः जिसके हृदय में अहिंसा की शान्त स्त्रोतस्विनी प्रवहमान है वह क्षमादान करता ही है क्योंकि **'क्षमा वीरस्य भूषणम्'**-क्षमा देना वीर का भूषण है ।

भगवान महावीर वीर हैं और अहिंसा का पालन करने वाला उस वीरता को धारण करता है । वह अपनी वीरता को हिंसा के रक्तकर्दम से पंकिल नहीं करता । इस प्रकार महात्मा ईसा को प्राणदण्ड दे दिया गया और सचाई के कण्ठ को निर्दयता से मरोड दिया गया । किन्तु सचाई तो कब्र से भी बोतली है, श्मसान की भस्म से भी उठ बैठती है । सचाई को जलाया नहीं जा सकता । उस विश्व-करुणा से सराबोर प्राणी के हृदय में जिस कील को ठोक दिया गया था, उसकी वेदना का ज्ञान जब संसार को हुआ तो उसके पास इसके सिवा दूसरा मार्ग नहीं रहा गया था कि वह प्रायश्चित के रुप में उसके उपदेशों और आदेशों को पालन करने का प्रयत्न करे और कहना नहीं होगा कि आज विश्व में ईसा के अनुयायियों की संख्या अनुपात में सर्वाधिक है । अभी हाल में की गयी जनगणना के अनुसार विश्व की जनसंख्या तीन अरब छह करोड अस्सी लाख है । इनमें मुसलमानों की संख्या ४३ करोड ७० लाख, कन्फ्यूसियनिस्टों की संख्या ३३ करोड ५० लाख, हिन्दुओं की ३४ करोड, बोद्धों की १३ करोड ५० लाख अथवा २६ करोड के बीच बताई जाती है । शेष एक-तिहाई संख्या ईसाइयों की है ।

पाखंडों के विरोध में उन्होंने सात्विक साहस दिखाया था । जो पथ भूल चुके थे उन्हें पथ दिखाने का प्रयत्न किया था । अहिंसा, सत्य, अचौर्य, ब्रह्मचर्य और अपरिग्रह का आग्रह किया था । यह सब सत्प्रयत्न उनके लिए अग्राह्य और भयप्रद था जो हिंसा, चोरी, मिथ्या, व्यभिचार और परिग्रह में आपाद-मस्तक डूबे हुए थे । जो तत्व अन्धकार में ही क्रियाशील रहते हैं वे प्रकाश का स्वागत कैसे कर सकते हैं ।

ईसा मसीह ने पृथ्वी पर 'गाड्स किंगडम ऑन अर्थ' अर्थात् इश्वरीय राज्य जिसे भारतीय रामराज्य जैसे प्रतीक शब्द से जान सकते हैं, की कल्पना की थी । वह अपने जीवन में उसी के लिए सतत प्रयत्नशील रहे ।

जब उनसे किसी ने पूछा कि वह ईश्वरीय राज्य कब आयेगा तो ईसा प्रश्नकर्ता के सरलत्व पर मुस्करा उठे । उन्होंने स्पष्ट किया कि उस ईश्वरीय राज्य के आगमान के लिए कोई विशेष समय नहीं है । वह आज-कल या परसों कभी भी आ सकता है । उसको बुलाने के लिए लोगों के हृदय में धर्म के मूल सिद्धान्त जिनमें अहिंसा, मैत्री, करुणा, उपकार, दान, दक्षिणता, अपरिग्रह और शौच इत्यादि सम्मिलित हैं, सक्रिय हो उठेंगे, उसी समय अपनी सम्पूर्ण सत्ता के साथ ईश्वरीय राज्य का प्रादुर्भाव होगा । उनके कथन का यह तात्पर्य था कि यदि आज ईश्वरीय राज्य के दर्शन नहीं हो रहे हैं तो इसमें हमारा ही दोष है । ठीक भी तो है कि जब तक बादलों की ओट रहेगी, सूर्य का बिम्ब विद्यमान होते हुए भी दृष्टिगोचर कैसे हो सकेगा ?

इस प्रकार महात्मा ईसा का उपदेश परमार्थ, प्रेम, सहयोग और अहिंसा सिखाता है । वह दूसरे के दोषों के देखने के स्थान पर आत्म-निरीक्षण का आग्रह करते हैं । उन्होंने अपने उपदेशों को छोटे-छोटे उदाहरणों, दृष्टान्तों और बोधगम्य विधाओं से सरल कर दिया हैं । वह कहते हैं - 'पहले अपनी आंख का लट्ठा (पेड) निकालो, तब दूसरे की आंख का तिनका निकाल सकोगे ।' 'ऊंट के लिए सुई की आंख में से निकल जाना सम्भव है, किन्तु दौलतमन्द के लिए ईश्वर के राज्य में प्रवेश पाना कठिन है ।' स्पष्ट है कि उनको 'अपरिग्रह' से प्रेम था और अधिक धनसंचय से उत्पन्न होने वाली बुराइयों से वे परिचित थे और

शुद्धैर्धनैर्विवर्धन्ते' शुद्ध रुप से धनार्जन करने पर तो धन का अति संचय हो नहीं सकता, ऐसा जो जैन-शास्त्रों में लिखा है, ईसा के शब्द उन्हीं की प्रतिध्वनि हैं। महाराष्ट्र के प्रसिद्ध सन्त 'नामदेव' ने कहा है कि नदी पर शेर पानी पीने जाए तो उसका जल क्षार नहीं बनता और गाय के लिए मधुर नहीं होता। ईसा ने कहा है कि तुम अपने हृदय में बुरे के लिए बुराई और अच्छे के लिए अच्छाई रखते हो तो क्या बडी बात है। यदि तुम बुरे को भी अपनी भलाई से 'मालामाल' कर दो तभी तुम्हारी विशेषता है। क्या सूर्य का प्रकाश श्मशान और मंदिर पर समान रुप से नहीं गिरता ?

महात्मा ईशु का जीवन सत्य के लिए समर्पित था, अहिंसा के प्रसार के लिए संकल्पित था। वह लंगोटी अथवा धोती लगाकर रहते थे। पैदल यात्रा करते थे। रास्ते में नंगी जमीन पर मुक्त गगन के नीचे सोते थे। तकिया नहीं लगाते थे। रोगियों की सेवा करते थे। गांवों की सादगी उन्हें पसन्द थी। उनका हृदय स्फटिक मणि के समान स्वच्छ था। उपदेश हृदय की गहराइयों से निकलते थे, जो श्रोताओं को वशीभूत कर लेते थे। उनके अधिकांश उपदेश जैनधर्म की प्रतिध्वनि प्रतीत होते हैं।

नवीं शताब्दी की एक प्रसिद्ध अरबी पुस्तक 'इकमालुद्दीन' में वर्णन है कि 'यूस आसफ पश्चिम से चलकर पूर्व के मुल्कों में आये। यहां उपदेश दिये।' इस पुस्तक में आया हुआ 'यूस आसफ' शब्द 'ईसा' वाचक ही है। अरबी भाषा में 'यूस' और 'यासु' से ईसा का ही तात्पर्य है। अफगानिस्तान और काश्मीर में जो तत्कालीन भारतीय प्रदेश थे, ईसा ने अपना अन्तिम जीवन बिताया।

हजरत ईसा ने परम्परा से चले आते हुए तत्कालीन यहूदी धर्म में जो महत्वपूर्ण क्रान्ति की, उसमें ईश्वर और मनुष्य के बीच पुरोहितों की आवश्यकता को उन्मूलित करना उल्लेखनीय है। उन्होंने कर्मकाण्ड की व्यर्थता को सिद्ध करते हुए बताया है कि ईश्वर इन आडम्बर भरे तौर-तरीकों और मारे गये पशुओं के जरदा-पुलावों से प्रसन्न नहीं होता, दिल की सफाई ही उसे प्राप्त कर सकती है। यहां 'दिल की सफाई' परिणामों की विशुद्धि का नामान्तर है। हजरत ने कहा कि ईश्वर के साथ अपनी आत्मा का सम्बन्ध जोडकर सिर्फ उस जैसा ही बनने का यत्न करना आदमी का मुख्य कर्तव्य और धर्म है। यहां भी 'वन्दे तद्गुणलब्धये' की

गूंज स्पष्ट प्रतीत होती है ।

बौद्धभिक्षु श्री धर्मानन्द कौसाम्बी ने 'पार्श्वनाथ का चातुर्याम धर्म' पुस्तक में लिखा है कि 'शुरु-शुरु में तो **ईसाई समाज अपरिग्रही** होता था । कुछ सम्पत्ति होती तो उसे वे सार्वजनिक काम में लगाते थे । अतः यह कहा जा सकता है कि पार्श्वनाथ के चार यामों को उन्होंने काफी हद तक अंगीकार किया था ।'

'हत्या न करो, झूठी साक्षी मत दो, चोरी न करो, व्यभिचार न करो, पराई वस्तु का लोभ न करो ।' महात्मा ईसा की ये शिक्षाएँ जैन अणुव्रतों की भावना के अनुरुप ही हैं । इसका कारण यह है कि ईसा ने जैन-श्रमणों के निकट रहकर शिक्षा पाई थी ।' ऐसा नागेन्द्रनाथ वसु, एम. ए. ने हिन्दी विश्वकोष भाग ३, सन् १९१९ के १२८ वें पृष्ठ पर लिखा है । पं. सुन्दरलाल ने 'हजरत ईसा और ईसाई धर्म' नामक पुस्तक के १६२ वें पृष्ठ पर लिखा है कि 'भारत में आकर हजरत ईसा बहुत समय तक जैन साधुओं के साथ रहे । जैन साधुओं से उन्होंने आध्यात्मिक शिक्षा तथा आचार-विचार की मूल भावना प्राप्त की ।'

भूषण शाह द्वारा लिखित-संपादित हिन्दी पुस्तक

		मूल्य
1.	जैनागम सिद्ध मूर्तिपूजा	100/-
2.	● जैनत्व जागरण	200/-
3.	● जागे रे जैन संघ	30/-
4.	पाकिस्तान में जैन मंदिर	100/-
5.	पल्लीवाल जैन इतिहास	100/-
6.	दिगंबर संप्रदाय : एक अध्ययन	100/-
7.	श्री महाकालिका कल्प एवं प्राचीन तीर्थ पावागढ	100/-
8.	अकबर प्रतिबोधक कौन ?	50/-
9.	● इतिहास गवाह है ।	30/-
10.	तपागच्छ इतिहास	100/-
11.	● सांच को आंच नहीं	100/-
12.	आगम प्रश्नोत्तरी	20/-
13.	जगजयवंत जीरावाला	100/-
14.	द्रव्यपूजा एवं भावपूजा का समन्वय	50/-
15.	प्रभुवीर की श्रमण परंपरा	20/-
16.	इतिहास के आइने में आ. अभयदेवसूरिजी का गच्छ	100/-
17.	जिनमंदिर एवं जिनबिंब की सार्थकता	100/-
18.	जहाँ नमस्कार वहाँ चमत्कार	50/-
19.	● प्रतिमा पूजन रहस्य	300/-
20.	जैनत्व जागरण भाग-2	200/-
21.	जिनपूजा विधि एवं निजभक्तों की गौरवगाथा	200/-
22.	● अनुपमंडल और हमारा संघ	100/-
23.	अकबर प्रतिबोधक कौन ? भाग-2	100/-
24.	महात्मा ईसा पर जैन धर्म का प्रभाव	50/-
25.	खरतरगच्छ का उद्भव	50/-
26.	प्राचीन जैन स्मारको का रहस्य	500/-
27.	जैन नगरी तारातंबोल : एक रहस्य	50/-

भूषण शाह द्वारा लिखित / संपादित गुजराती पुस्तक

1.	મંત્ર સંસાર સારં	200/-
2.	● જંબૂ જિનાલય શુદ્ધિકરણ	30/-
3.	● જાગે રે જૈન સંઘ	20/-

4. ● ઘંટનાદ

5. ● શ્રુત રત્નાકર (પૂ. ગુરૂદેવ જંબૂવિજયજી મ.સા.નું જીવન ચરિત્ર)

6. જિનશાસનના વિચારણીય પ્રશ્નો 50/-

भूषण शाह द्वारा संपादित अंग्रेजी पुस्तक

1. ● Lights 300/-

2. ● History of Jainism 300/-

चल रहा विशिष्ट कार्य

जैन इतिहास

★ आदीश्वर भगवान से वर्तमान तक

★ यह सूचि इ.सं. 2019 वि.सं 2075 की है इसके पूर्व की सभी सूचि के अनुसार मूल्य खारीज कीए जाते है । अबसे इसी मूल्य के अनुसार पुस्तकें प्राप्त होगी ।

★ साधु-साध्वीजी भगवंतो एवं ज्ञानभंडारो को पुस्तक भेट दिये जाते है ।

★ सभी प्रकाशन का न्याय क्षेत्र अहमदाबाद है ।

★ कोरीयर से मंगवाने वाले ''मिशन जैनत्व जागरण'' अहमदाबाद के एड्रेस से ही मंगावे व फोन नं. 9601529534 पर ज्ञात कराये ।

● मार्क वाले पुस्तक उपलब्ध नहीं हैं ।